अध्याय–9

समकालीन भारतीय मूर्तिकला

उद्‌भव एवं विकास

समकालिक भारतीय मूर्तिकला मानव की शाश्वत भावनाओं का मूर्त रूप है तथा परम्पराओं का विकासवादी दृष्टिकोण भी है। सिन्धु सभ्यता से प्रारम्भ होकर , मोहनजोदड़ो व हड़प्पा काल के पश्चात् मध्ययुग से गुजरते हुए आधुनिक काल तक अगणित मूर्तिशिल्प इसके प्रमाण हैं। सामान्यतः धातु , प्रस्तर , लकड़ी , शीशा , लाख , मिट्‌टी , पेपरमैशी , फाइबर आदि उपादानों द्वारा गढ़कर , खोदकर , उभारकर , कोरकर , औजार या हाथ के प्रयोग से , सांचे के माध्यम से या किसी भी अन्य प्रक्रिया से सृजित आकृति को मूर्ति के रूप में जाना जाता है। स्थापत्य व मूर्ति का गहरा सम्बन्ध है। स्थापत्य में जो भावना व कल्पना कलाकार डालता है वह भी मूर्तिकला है। मूर्तिकला देश स्थान की सांस्कृतिक प्रगति , मानव जीवन और धार्मिक चिन्तन की परिचायक है।

प्राचीन भारतीय मूर्तिकला धर्म के संरक्षण में विकसित हुई जिसके उदाहरण हम शैशुनाग , मौर्य, शुंग , गांधार , कुषाण – सातवाहन , गुप्त – वाकाटक तथा मध्यकालीन मूर्तिकला में देख सकते हैं। भारतीय कला में मूर्ति एक आश्चर्यजनक अद्‌भूत आकार के रूप में प्रतिष्ठित रही है जिसका प्रमाण सिन्धुघाटी सभ्यता से प्राप्त नृत्यांगना की जीवन्त मूर्ति है। विविध युगों में मूर्ति धार्मिक विषयवस्तु या स्थापत्य सज्जा के रूप में निरन्तर विकसित हुई है।

चित्रकला की अपेक्षा मूर्तिकला की परम्परा का विकास मंद गति से हुआ है। किन्तु समसामयिक मूर्तिकला का विकास प्रयोगवादी प्रवृत्ति के कारण तेजी से हो रहा है। मूर्तिकला के इस विकास का सूत्रपात कलागुरू अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने किया। तत्पश्चात् देवीप्रसाद राय चौधरी (1899–1975ई.) ने फ्रांस के प्रभाववादी मूर्तिकार रोदिन से प्रभावित होकर मूर्तिकला को एक विशेष मूल्य प्रदान किया। रामकिंकर बैज (1906–1980ई.) तथा सुब्रयालु धनपाल (1919–2000ई.) देश के प्रथम आधुनिक मूर्तिकार हुए जिन्होंने अकादमिक यथार्थवाद को तोड़ा। इसके बाद तो प्रदोषदास गुप्ता , चिन्तामणिकर , शंखो चौधरी (1916) , धनराज भगत , मीरा मुखर्जी , पी.वी. जानकीराम , वी.पी. करमाकर , हरिदासन् राम. वी. सुतार, आदिमूलम आदि ने भारतीय मूर्तिकला क्षेत्र में नये आन्दोलन का सूत्रपात किया। इन मूर्तिकारों ने सीमेंट , कांस्य , धातु , प्लास्टर , बहु माध्यम , फाइबर आदि पदार्थो में विस्तृत प्रयोग किये। इसके पश्चात् तो रचनात्मक क्रांति का ऐसा दौर आया कि इन्स्टालेशन कला (प्रतिष्ठापन कला) का नवीन रूप उभर कर आया जो मूर्तिकला के मूलभूत तत्वों को लेकर ही विकसित हुआ। इससे चित्रकार व मूर्तिकार

का भेद भी समाप्त हो गया।

इन्स्टालेशन कला मूर्तिकला से उत्पन्न प्रयोगात्मक कला है जिसमें विविध तत्वों को संश्लेषित कर कला निर्मित की जाती है। समकालीन कला इतिहास में 20 वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध रचनात्मक क्रांति से जुड़ा रहा है। इस समय यूरोप में मूर्तिशिल्प कला के मूलभूत तत्वों को लेकर 'इन्स्टालेशन आर्ट' का प्रयोग हुआ। इस कला में रंगमंच प्रतिकृतियाँ , नाटक व घटना आदि के भौतिक तत्वों को एकत्रित कर निर्माण किया जाता है। यहां क्रियाशीलता महत्वपूर्ण है जिसमें व्यावसायिकता के विपरीत नष्ट किये जाने वाले पदार्थों के प्रयोग से एक नवीन अवधारणा को अभिव्यंजित किया जाता है। भारत में प्राचीन परम्परागत प्रतिष्ठापन कला लोककला , धार्मिक व अनुष्ठानपरक संस्कारों के रूप में मिली है। मुहर्रम पर ताजियों का निर्माण , सांझी कला आदि में एक उद्धेश्य को लेकर कला रचना की जाती है तथा उद्धेश्यपूर्ति पश्चात् उन्हें नष्ट कर दिया जाता है समकालीन भारतीय कला में यह कला 1990 ई. में नेकचन्द द्वारा चण्डीगढ़ में नष्ट योग्य पदार्थो द्वारा 'रॉक गार्डन' के निर्माण के साथ प्रारम्भ हुई। तत्पश्चात् एम.एफ. हुसैन , विवान् सुन्दरम् , अमरनाथ सहगल , सतीश गुजराल , शमशाद हुसैन , राजेन्द्र टिक्कू , सुबोध गुप्ता, शीला गौडा आदि द्वारा इस कला का प्रदर्शन किया गया।

समकालीन भारतीय मूर्तिकला के इतिहास में कुछ प्रमुख मूर्तिकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है जिन्होंने सृजन को नवीन दिशा देने के साथ ही अनुयायी शृंखला तैयार की।

देवीप्रसाद रॉय चौधरी

समय – 1899–1975 ई.

शैली – यथार्थवादी

माध्यम – कांस्य , मिट्टी आदि

देवीप्रसाद रॉय चौधरी कलागुरू अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के प्रतिभाशाली शिष्यों में थे जिन्होंने कला को चैन्नई में प्रसारित करने का कार्य किया। आप मूर्तिकला व चित्रकला दोनों में समान रूप से सिद्धहस्त थे। आपने बंगाल स्कूल की प्रचलित पद्धतियों से अलग निजी शैली का प्रवर्तन किया। चित्रकार से अधिक मूर्तिकार के रूप में जाने गये। पद्मभूषण प्राप्त देवीप्रसाद रॉय चौधरी मद्रास स्कूल ऑफ आर्ट्स एण्ड क्राफ्ट्स में तीन वर्षों तक प्राचार्य पद पर रहे।

आपके शिल्प हृदय में रूपाकार होकर अनायास ही मिट्टी में ढल जाते थे। साम्यवादी होने के कारण आपने निम्न वर्ग के संघर्षपूर्ण जीवन को कला में साकार किया। ''श्रम की विजय'' नामक कांस्य मूर्तिशिल्प इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। आपने पर्सी ब्राउन , जगदीश चन्द्र बोस , एनीबेसेन्ट , महात्मा गाँधी , मोतीलाल नेहरू आदि के आवक्ष शिल्प भी बनाये। मूर्तिकला के क्षेत्र में आपने रोमांसवादी प्रवृत्ति

'श्रम की विजय' देवीप्रसाद रॉय चौधरी

का सूत्रपात कर महत्वपूर्ण योगदान दिया जिससे मूर्तिकला के क्षेत्र में विविध मार्ग खुले और प्रयोगवादी विचारधारा विकसित हुई।

रामकिंकर बैज

समय – 1906–1980 ई.

शैली – आधुनिक यथार्थवादी

माध्यम – कंकरीट , मिट्टी आदि

पश्चिम बंगाल में जन्मे रामकिंकर बैज ने शान्तिनिकेतन से कला डिप्लोमा लिया तथा वहीं शिल्पकला विभागाध्यक्ष रहे। यहीं आपने अपना समस्त जीवन व्यतीत किया। मिट्टी , कंकरीट , प्रस्तर व कांस्य आदि सामग्री से आपने श्रेष्ठ शिल्प निर्मित किये। आपके शिल्प सदैव खुले मैदान में स्थित होने के कारण विशिष्ट रहे। शिल्प का गठन , रूप सौष्ठव, अनुपात , उभार , स्थितिजन्य लघुता तथा दीर्घता में एक सुनिश्चित विचार के साथ ही रेखांकन की गति व वक्रता विशिष्ट रही। आपका मत था कि स्वयं

'संथाल परिवार' **रामकिंकर बैज**

मिट्टी तैयार किये बिना शिल्पकार नहीं बना जा सकता। आपके शिल्प अतियथार्थवादी व अभिव्यंजनावाद से प्रभावित रहे। सुजाता , संथाल परिवार , लकड़ी व कुत्ता , मिथुन , रवीन्द्रनाथ ठाकुर का कांस्य आवक्ष आदि आपके महत्वपूर्ण शिल्प हैं।

शंखो चौधरी

समय – 1916–2005 ई.

शैली – आधुनिक

माध्यम – विविध प्रकार के

बिहार में जन्मे शंखो चौधरी एक प्रयोगवादी मूर्तिकार थे। शिल्प को आपने जीवन की धुन तथा उद्धेश्य माना। कल्पनाशीलता व अस्थिर प्रकृति के कारण आप कभी भी एक माध्यम , तकनीक , सामग्री या मात्र टेबल पर शिल्प लगाने तक सीमित नहीं रहे। यही कारण है कि आपके शिल्पों में अन्तिम सज्जा के रूप में विपरीत सामग्री (अर्थात प्रस्तर पर लकड़ी , लकड़ी पर धातु पत्र या सीमेन्ट का प्रयोग) के लिए पहली बार नवीन प्रयोग मिलता है। आपने बड़ोदरा विश्वविद्यालय में शिल्प की पृथक कार्यशाला स्थापित

की। जहाँ आप बीस वर्षों तक अध्यापन करते रहे। यही प्रयास राष्ट्रीय ललित कला अकादमी की गढ़ी

कार्यशाला के लिए भी किया।

धनराज भगत

समय – 1917–1988 ई.

शैली – आधुनिक प्रयोगवादी

माध्यम – विविध प्रकार के

लाहौर में जन्मे धनराज भगत ने मेयो कॉलेज ऑफ आर्ट , लाहौर से कला शिक्षा ली तथा कॉलेज ऑफ आर्ट , नई दिल्ली के मूर्तिकला विभागाध्यक्ष पद पर कार्यरत रहे। पेपरमेशी , सीमेंट , धातु ढलाई व वेल्डिंग , सिरेमिक , लकड़ी पर उत्कीर्णन , प्रस्तर धातु , इनेमलिंग माध्यम व तकनीक में स्वनिर्मित तथा औजारों से अपने आप बने डांसिंग, सितारवादक , बांसुरीवादक , कॉस्मिक मेन , द किस , द किंग , आदि शिल्प अमूर्तता , ज्यामितीयता तथा ऊपर से यान्त्रिक पदार्थ (यथा–पेच ,कील ,तार आदि) लगाने के नवीन प्रयोगों से विशिष्ट हैं। प्राचीन कला की प्रेरणा व परिवर्तित होते हुए

आधुनिक परिवेश का संश्लेषण कर विविध माध्यमों , उपकरणों का प्रयोग , पुरातन व आधुनिक का मेल आपके शिल्पों की अद्वितीय विशेषता है।

मृणालिनी मुखर्जी

जन्म – 1949 ई..

शैली – आधुनिक प्रयोगवादी

माध्यम – जूट ,रस्सी आदिं

मुम्बई में जन्मी व बड़ोदरा से शिक्षित मृणालिनी मुखर्जी ने अपनी कला यात्रा प्राकृतिक तन्तुओं से की। आप जूट की रस्सी , सूतली व डोरी से शिल्प बनाती हैं यह तकनीक व माध्यम सामान्यतः परम्परागत गृह उद्योग में काम में लिया जाता है आपने इस तकनीक को विकसित कर सृजनात्मकता के नवीन आयाम दिये। गाँठदार धरातल में त्रिआयामी प्रभाव देकर धातु के छल्लों के प्रयोग द्वारा आप इन कोमल शिल्पों को एक निर्धारित आकार व आधार देती हैं। इससे मूर्तिशिल्प स्वतन्त्र रूप से खड़े रह सकते हैं। वनश्री , वाहन , वूमेन ऑन पिकॉक आदि शिल्प अद्वितीय हैं। वर्तमान में आप सिरेमिक में भी शिल्प निर्माण करती हैं।

वस्तुतः समकालीन मूर्तिकला में वैज्ञानिकता का समावेश , पारम्परिक स्त्रोतों से प्रेरणा तथा तकनीक व माध्यम के प्रयोगों का संश्लेषण होने लगा है। उक्त प्रमुख मूर्तिकारों के अतिरिक्त अनेक कलाकार है जिन्होने समकालीन मूर्तिकला में अपना योगदान दिया है तथा दे रहे हैं। शंखो चौधरी ने प्रस्तर तराशने के क्षेत्र में एक विशेष दृष्टिकोण दिया जिससे प्रस्तर का सुन्दर व सरल प्रयोग कर संतुलन के साथ भूमि पर शिल्प स्थापित किये जाने लगे। इससे इस विचार को भी बल मिला कि मूर्ति केवल ठोस आकार को ही नहीं कहते वरन् कोई भी आकार , पत्थर या माध्यम मूर्तिगत सम्भावनाएं ग्रहण कर सकता है। गिरीश भट्ट , नागजी पटेल , रमेश पटेरिया , विद्यारतन खजूरिया , जनक झंकार नरजारी , गुरफान किदवई, लीला मुखर्जी , कनी अप्पन , शंकर नन्दगोपाल , सद्दीक दहलवी , अंकित पटेल , रवीन्द्र जमवाल आदि ऐसे मूर्तिशिल्पों को आकार दे रहे हैं जो गति , ताजगी व जीवन्तता से परिपूर्ण हैं। आज मूर्तिकारों का सृजन अद्भूत है जिसे किसी स्थापित श्रेणी में रखना कठिन है।

राजस्थान की समकालीन मूर्तिकला

18 वीं शताब्दी और 19 वी शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे जब ब्रिटिश सत्ता के माध्यम से भारत में आए यथार्थवाद का प्रचार प्रसार जोरों से हो रहा था तब यहां की मूर्तिकला पर भी इस यथार्थवादी शैली का प्रभाव पड़ना ही था। अंग्रेज उच्च्य अधिकारियों के साथ–साथ यहां के राजे महाराजे भी इसी शैली में चित्रादि बनवाते थे। अतः उस समय के अधिकांश मूर्तिकारों में यथार्थवादी शैली के प्रति रूझान बढा। परंपरागत चित्रण पद्धति की तरह ही ऐसे कई शिल्पी घराने भारतीय पारंपरिक मूर्तिकरण की विधा में काम करते आए हैं। वे यदा कदा बनने वाले मन्दिरों आदि के लिये मूर्तियां बनाने में व्यस्त रहे हैं। राज्य की आधुनिक मूर्तिकला में कुछ शिल्पकार ऐसे ही परिवारों से आए हैं। कई शिल्पकार देश के अग्रणी मूर्तिकारों एवं यूरोपीय कलाकारों के अनुसार कार्य करने को तत्पर हुए। देश के कलाविद्यालयों से प्राप्त कलाशिक्षा ने उनका मार्ग प्रशस्त किया। अकादमियों एवं विभिन्न कलासंस्थाओं के प्रोत्साहन स्वरूप शिल्पविधा में भी स्तरीय कार्य होने लगा। वर्तमान में शिल्पकारिता के क्षेत्र में वरिष्ठ मूर्तिकारों के साथ कई युवा मूर्तिकार भी सृजनरत हैं जिन्होंने राष्ट्रीय –अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपने सृजनकार्य से एक पहचान स्थापित की है।

राजस्थान ललित कला अकादमी ने अपने उल्लेखनीय योगदान के लिये चार मूर्तिकारों को 'कलाविद्' से सम्मानित किया है।

गोपीचन्द मिश्रा

जन्म – 1907

शैली–यथार्थवादी एवं पारंपरिक

माध्यम– संगमरमर व प्लास्टर ऑफ पेरिस

गोपीचन्द मिश्रा के पिताजी की शीघ्र ही मृत्यु होने से नाना श्री नेमीचन्द ने ही पालापोषा और उन्हीं से मूर्तिकला का अध्ययन एवं अनुभव प्राप्त किया। फिर शिल्पाचार्य श्री नर्मदाशंकर जी के अधीन रहकर जैन मन्दिर के निर्माण में सहयोग किया। यहां उन्होंने स्वतंत्र रूप में इन्द्र, द्वारपाल ,यक्ष–यक्षिणी परियों तथा अन्य देवी देवताओं की कई सुन्दर एवं मोहक मूर्तियां बनाकर अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। यहीं से मूर्तिकला में विधिवत् शिक्षा प्राप्त करने की चाह में बड़ौदा जाकर शिल्पाचार्य श्री कोल्हारकर के निर्देशन में प्रयोगात्मक और नवीन सृजनात्मक दिशा को समझने को प्रेरित हुए। अब उनकी सफलता की राह भी प्रशस्त हुई। जयपुर में ही रहकर अपनी परंपरागत शैलियों के साथ सृजनात्मक शैली में उन्होंने प्रशंसनीय कार्य किये। टिपारी की महारानी का मन्दिर , महाराजा मोरवी मन्दिर, पिलानी का बिड़ला मन्दिर जैसे कई उत्कृष्ट उदाहरण उनके शिल्पांकन को दर्शाते हैं।

धार्मिक के अलावा उन्होंने राजनीति के विषय भी चुने तथा माँ और बच्चा ,सांप और सपेरा ,कम्बल ओढे वृद्ध जैसे आधुनिक प्रयोगशीलता वाले शिल्प भी खूब बनाए ऐसी कृतियां अकादमी से पुरस्कृत भी हुई। सीधे और सरल प्रकृति वाले मिश्राजी पुरानी परम्पराओं से जुड़े होने के साथ ही नवीनता के पक्षकार थे। मूर्तिशिल्प में महत्वपूर्ण योगदान के लिये उन्हें राज्य की ललित कला अकादमी ने 1978 में कलाविद् की सर्वोच्च उपाधि से सम्मानित किया। अकादमी द्वारा कलाविद् सम्मान भी सर्वप्रथम इन्हें ही मिला था।

उषा रानी हूजा

जन्म–18 मई 1923

शैली– यथार्थवादी एवं प्रयोगवादी शैली

माध्यम– ब्रोंज एवं लोह धातु

श्रीमती उषारानी हूजा ने दिल्ली विश्वविद्यालय से दर्शन शास्त्र में एम.ए.किया । फिर लन्दन में 1949से 1954 तक वास्तुकला की शिक्षा प्राप्त की। उनके स्त्रियोचित स्वभाव के विपरीत उनके मूर्तिशिल्पों

में एक तरह का पौरूष दिखता है। उन्होंने अपने शिल्पों में प्राणियों की गति को कैद किया है। श्रम में जुटे मनुष्य एवं पशुओं के प्रति उनमें विशेष अनुराग रहा है। राष्ट्रध्वज की रक्षा करते देशभक्त वाली प्रतिमा शृंखला देखने से स्पष्ट होता है कि वे परंपरागत मूर्तियों की तरह बारीकी तराशकर उन्हें सुन्दरता देने में विश्वास नहीं करती बल्कि श्रम, मेहनत और त्याग जैसे संघर्षशील गुणों को वैसी ही साहसिक शैली में व्यक्त करती हैं। कृतियों को तराशने का उनका तरीका रफ टफ है लेकिन है बहुत प्रभावशाली। धान सूपती कृषक बालिका, श्रमिकवर्ग जैसी मूर्तियों में जीवन की गति ,अंगों के मोड़ और शारीरिक संरचना (एनॉटोमी) देखते ही बनती है। जवाहरलाल नेहरू मार्ग (जयपुर)के एक चौराहे पर बना शहीद स्मारक डाकुओं से युद्ध करते हुए कर्तव्यनिष्ठ सिपाहियों के बलिदान की कहानी है। इसी तरह से स्पोर्ट्स काउंसिल में स्थापित 'क्रिकेट के गेंदबाज' भी गतिशीलता को अलग ही ढंग से दर्शाती है। इनकी बनाई कई मूर्तियां स्वीडन ,वाशिंगटन ,फिलीपीन जैसे विदेशी शहरों के साथ भारत में भी अनेक जगह सुस्थापित है। राजस्थान में उनके सृजनात्मक योगदान एवं प्रयोगशीलता के क्षेत्र में एक नई चेतना जगाने के लिये उन्हें 1990 में 'कलाविद्' सम्मान से अलंकृत किया गया। उनके अधिकांश शिल्प लोह और ब्रोंज धातु में बने हैं। मूर्तिकला के अलावा उन्होंने खेलकूद, समाज सेवा एवं अंग्रेजी की कविताएं लिखने में भी अपनी प्रतिभा दिखाई है।

हरिदत्त गुप्ता

समय– 1921–1909

शैली– प्रकृतिवादी

माध्यम –काष्ठ

हरिदत्त गुप्ता को बचपन से ही साबुन ,सॅापस्टोन व मुलायम लकड़ी पर विविध आकार बनाने

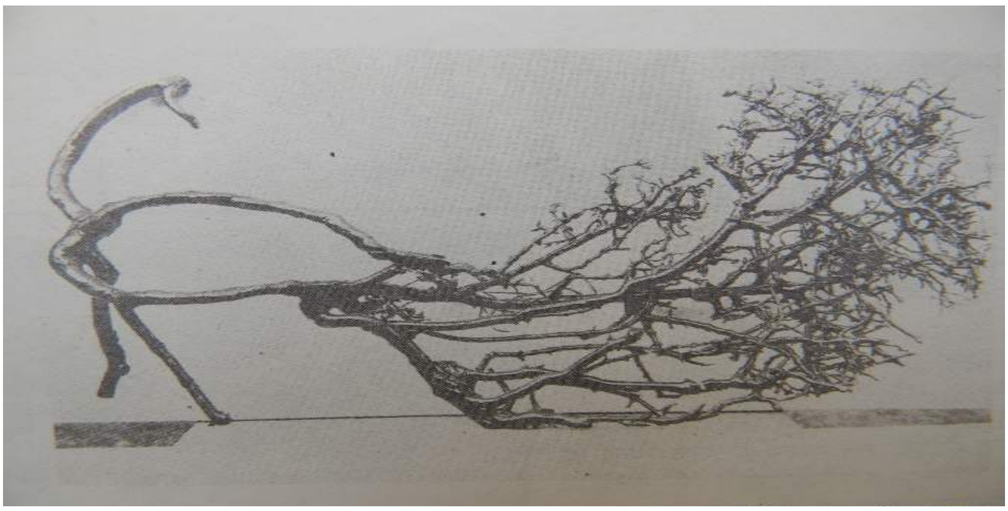

में रूचि थी। बड़े होने पर और रूड़की से इंजीनियरिंग की शिक्षा लेने के दौरान भी उनकी कलात्मक रूचि को तृप्त करने वाला अभ्यास कार्य जारी रहा। इसीलिए इन्हें कॉलेज प्रशासन द्वारा ड्रॉइंग मेडल और थॉमसन पुरस्कार दिया गया। सिविल इंजीनियरिंग डिग्री पूर्ण होते ही राजस्थान में राज्य सेवा के कई उच्च पदों पर रहे और सेवानिवृति पश्चात् राजस्थान लोक सेवा आयोग के सदस्य एवं अध्यक्ष पद पर भी रहे। ऐसे जिम्मेदार पदों पर कर्तव्य निभाते हुए भी समयानुसार कला साधना जारी रही। रेखांकन एवं चित्रांकन के साथ साथ अब काष्ठशिल्प भी वे तराशने लगे थे। पेड़ों,झाड़ियों आदि की टहनियों और तनों में इनके अन्दर का कलाकार मनमाफिक आकार ढूंढ लेता था और उसे वे थोड़ा सा और तराशकर, संवारकर अनोखे शिल्प के रूप में प्रस्तुत करते। अकादमी की वार्षिक प्रदर्शनियों में प्रदर्शित एवं 5 बार पुरस्कृत होने पर कई बडे कलावंतों का ध्यान इन्होंने आकर्षित किया।यह एक तरह से राजस्थान की समसामयिक कला में नई प्रेरणा और नई ताजगी भरने जैसा था। वेटिंग गर्ल, हॉर्सेज , डांसिंग फिगर, बर्ड्स, एनीमल्स, रेस्ट, लेडी विद डॉग जैसी कृतियां कलात्मक विशेषताओं और सौदर्य से पूर्ण है। प्रकृति के विभिन्न अंगों में उनकी पारखी नजर कला के कई अनोखे स्वरूप तलाश लेती थी। ऐसे काष्ठशिल्प विभिन्न मानवीय स्थितियों एवं भावों को प्रतीकात्मक रूप में व्यक्त कर देते हैं। इसी तरह से गुप्ताजी ने अपने मूल कार्यक्षेत्र विज्ञान और तकनीकी के साथ कलात्मक प्रतिभा का सुन्दर सामंजस्य बिठाते हुए प्रतिभा प्रदर्शन किया। इनके महत्त्वपूर्ण योगदान के कारण राजस्थान ललित कला अकादमी ने 1992 में इन्हें 'कलाविद्' से सम्मानित किया।

लल्लूनारायण शर्मा गौतम

जन्म –1924

शैली – यथार्थवादी

माध्यम – पत्थर

जयपुर के चांदपोल क्षेत्र में खेजडे एवं भिंडों के रास्ते में मूर्तिकारों के कई परिवार बसे हैं। यहां बनी सुन्दर धार्मिक पारंपारिक मूर्तियाँ देश विदेश के कई कोनों में पहुॅच चकी हैं। यहीं के एक मूर्तिकार परिवार में लल्लूनारायणजी का जन्म 1924 में हुआ था। पहले अपने परिजनों से मूर्ति कौशल जाना, फिर स्कूल ऑफ आर्ट से मूर्तिकला में डिप्लोमा लिया। कुछ समय बाद यहीं चित्रकला व क्लेमॉडलिंग में भी दक्षता हासिल की। आप इस समय तक कुशल शिल्पी बन चुके थे। किसी यूरोपियन मेहमान द्वारा बैठे हुए पहलवान की मूर्ति बनानी थी ।आपने इसका मिट्टी में जो मॉडल बनाया उसीसे वह अतिथि काफी प्रभावित हो गया था। कार्यकुशलता के साथ आप मूर्तियों के चेहरों पर भावाभिव्यक्ति करने में भी बहुत निपुण थे। इनकी विशेष पहचान लाइफ स्टडी और पोर्ट्रेट बनाने में थी। पनिहारिन, मां और बच्चा जैसे

शिल्पों में वात्सल्य भाव, यथार्थ अंकन की बारीकियां आदि देखते ही बने हैं। इसके अलावा महात्मा गांधी व अन्य महापुरूषों के भी कई शिल्प बनाए जिनके कारण आपकी राष्ट्रीय स्तर पर पहचान हुई एवं विभिन्न संस्थाओं द्वारा सम्मानित, पुरस्कृत भी हुए । इसमें आईफैक्स एवं राजस्थान हस्तशिल्प कौशल के पुरस्कार प्रमुख है। आपने असंख्य शिल्प कृतियां निर्मित की। व्यावसायिक मांग पूर्ति के साथ स्वांतःसुखाय शिल्परचना भी खूब की। अकादमी ने आपके योगदान के लिये 1993 में 'कलाविद्' से सम्मानित किया।

उपरोक्त कलाविदों के समकक्ष ही और भी मूर्तिकार सृजनरत हैं और रहे हैं। बंगाल मूल के स्व. टी.पी. मित्रा ने कई उत्कृष्ट शिल्प बनाए एवं राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट में 1935 से 1968 तक अध्यापन कार्य भी किया। भीलवाडा में कार्यरत व 1938 को देवगढ़ में जन्मे श्री गोवर्धनसिंह पंवार व्यंग्य एवं कटाक्ष की अभिव्यक्ति करते राजनैतिक विषयों वाले काष्ठशिल्पों के लिये विशेष रूप से जाने जाते हैं। आपने टेराकोटा में भी कई शिल्प बनाए हैं। जयपुर के श्री रूपचन्द शर्मा स्क्रेप मेटल में नवनवीन आकार गढ़ने में कुशल है। हाल ही में मूर्तिकरण में अपने उल्लेखनीय योगदान के लिये अर्जुन प्रजापति को भारत सरकार द्वारा 'पद्मश्री' से सम्मानित किया गया है। पारंपरिक वेशभूषावाली नारी आकृतियों की सुन्दरता एवं शारीरिक सौष्ठव को दर्शाने में उनकी विशेष पहचान है। इन पत्थर के आकारों में भी उन्होने पारदर्शी आंचल में सुन्दर मुखड़े बखूबी उभारे हैं। आनंदीलाल वर्मा , अर्जुनलाल वर्मा ने भी समय समय पर कई उत्कृष्ट शिल्प रचनाएं की हैं।

काफी समय तक राजस्थान में चित्रकारिता की तुलना में मूर्तिकरण कम होता रहा। कारण –

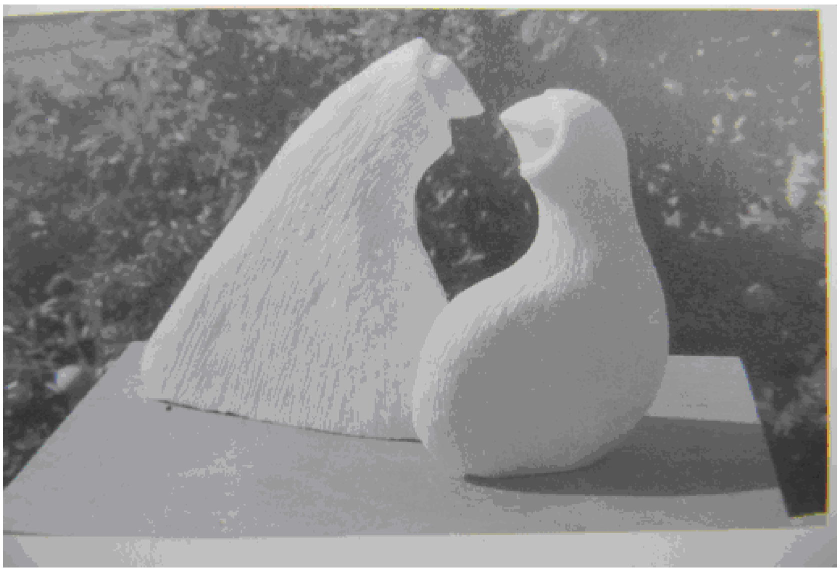

बर्ड्स : सी.पी. चौधरी

मूर्तिकला के माध्यम का सहज में उपलब्ध न होना। उसके संचालन, औजार , उपकरण आदि कई चरणों में आने वाली कठिनाइयां भी रही। लेकिन राज्य में जो भी कार्य हुआ है उसने राष्ट्रीय स्तर पर एक स्थान बनाया है। 20 वीं सदी के उत्तराद्धे से सृजन –स्वातंत्र्य बढा है। कलाकार माध्यम के चयन में भी अधिक स्वतंत्र हुआ है। आज पत्थर, धातु, काष्ठ के अलावा सीमेन्ट, फाईबरग्लास ,प्लास्टर , रस्सियां, कागज, कपड़ा, कोयला, ईंट, कांच, प्लास्टिक, घरों का अनुपयोगी रद्दी सामान अर्थात् कोई भी चीज मूर्तिकार अपनी अभिव्यक्ति के लिये चुन सकता है। नवीन मशीनरी और सुलभ औजारों ने भी समसामयिक शिल्पकारिता को और समृद्ध किया है। जयपुर के मूर्ति मोहल्ला में कार्यरत् मिश्राबन्धु राजेन्द्र, देवेन्द्र, रवि, अरविन्द ने देव प्रतिमाओं के साथ साथ संगमरमर के कई तरह के अमूर्त आकार गढ़े हैं। सी.पी. चौधरी ने भी संगमरमर में रचनात्मक प्रयोग किये। डॉ.गगनबिहारी दाधीच ने मोलेला की पारंपरिक मूर्तिकला तकनीक से नवीन रूपाकार गढे हैं। ज्ञानसिंह पत्थरों में भी मोम की तरह पिघलते लचीले आकार रचने में कुशल हैं। हर्ष छाजेड़ ने सोपस्टोन एवं समुद्री झाग से आकर्षक सूक्ष्म आकार बनाए हैं। अंकित पटेल धातु के गत्यात्मक घूमते शिल्पों के लिये जाने जाते हैं। पंकज गहलोत भी संगमरमर में विभिन्न रंगतों, पोतों वाले सृजन कार्य कर रहे हैं। वैश्विक कलारूपों के अनुसार भूपेश कावड़िया ने शिल्पविधा में संगमरमर एवं अन्य मिश्रित माध्यमों से अनेक प्रशंसित प्रयोग किये हैं। समसामयिक मूर्तिकरण में इस समय अशोक गौड,सुमन गौड, हेमन्त जोशी, नसीम अहमद, दिनेश उपाध्याय,विनोद कुमार आदि भी उल्लेखनीय कार्य कर रहे हैं।

<u>अभ्यास प्रश्न</u>

लघुत्तरात्मक प्रश्न

1. किन्हीं पांच भारतीय समकालीन मूर्तिकारों के नाम बताइये।
2. रामकिंकर बैज ने किस माध्यम में मूर्ति रचना की।
3. जूट एवं रस्सी से शिल्प रचना करने वाले मूर्तिकार का नाम बताइये।
4. राज्य में अब तक कितने मूर्तिकारों को कलाविद् सम्मान मिल चुका है ? नाम बताएं।
5. घूमते हुए शिल्प बनाने वाले मूर्तिकार का नाम बताएं।
6. वर्तमान में कार्यरत् किन्हीं चार मूर्तिकारों के नाम बताइये।
7. जयपुर में स्थित शहीदस्मारक की शिल्परचना किसने की ?
8. कलाविद् हरिदत्त गुप्ता ने किस माध्यम में शिल्प सृजन किया है?

वर्णनात्मक प्रश्न

1. भारतीय समकालीन मूर्तिकला का परिचय दीजिए।
2. प्रमुख भारतीय समकालीन मूर्तिकारों के कार्यो का वर्णन करें।
3. राजस्थान की समकालीन मूर्तिकला का वर्णन करें।
4. दो प्रयोगवादी कलाविदों उषारानी हूजा एवं हरिदत्त गुप्ता के सृजन कार्य का तुलनात्मक विश्लेषण करें।